।। वेयणापच्चयविहाणाणुयोगद्दारं ।।

वेयणापच्चयविहाणे त्ति ।। १ ।।

एदमहियारसंभालणसुत्तं, अणवगयाहियारस्स अंतेवासिस्स परूवणाए फला-भावादो । सव्वं कम्मं कज्जं चेव, अकज्जस्स कम्मस्स ससर्सिंगस्सेव अभावावत्तीदो । ण च एवं, कोहादिकज्जाणमत्थित्तण्णहाणुवव[1] त्तीदो कम्माणमत्थित्तसिद्धीए । कज्जं पि सव्वं सहेउअं चेव, णिक्कारणस्स कज्जस्स अणुवलंभादो । तम्हा सुत्तेण विणा वि कम्माणं सहेउअत्तसिद्धीदो पच्चयविहाणं णाढवेदव्वमिदि[2] ? एत्थ परिहारो वुच्चदे कम्माणं कज्जत्तं सकारणत्तं च जुत्तीए सिद्धं चेव । किंतु पच्चयस्स विहाणं पवंचो भेदो अणेण परूविज्जदे कारणविसयविप्पडिवत्तिणिराकरणट्ठं ।

णेगम-ववहार-संगहाणं-णाणावरणीयवेयणा पाणादिवादपच्चए ।। २ ।।

पाणादिवादो णाम[3] पाणेहिंतो पाणीणं विजोगो । सो जत्तो मण-वयण-कायवावा-

....

वेदनाप्रत्ययविधान अधिकार प्राप्त है ।। १ ।।

यह सूत्र अधिकारका स्मरण करानेवाला है, क्योंकि, अधिकारसे अनभिज्ञ शिष्यके प्रति की जानेवाली प्ररूपणाका कोई फल नहीं है ।

शंका – सब कर्म कार्यस्वरूप ही है, क्योंकि, जो कर्म अकार्यस्वरूप होते हैं उनका खरगोशके सींगके समान अभावका प्रसंग आता है । परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, क्रोधादिरूप कार्योंका अस्तित्व बिना कर्मके बन नहीं सकता, अतएव कर्मका अस्तित्व सिद्ध ही है । कार्य भी जितना है वह सब सकारण ही होता है, क्योंकि, कारण रहित कार्य पाया नहीं जाता । इस कारण चूँकि सूत्रके बिना भी कर्मोंकी सकारणता सिद्ध है, अत: प्रत्ययविधानका प्रारम्भ करना उचित नहीं है ?

समाधान – यहाँ उपर्युक्त शंकाका उत्तर कहा जाता है – कर्मोंकी कार्यरूपता और सकारणता तो युक्तिसे ही सिद्ध है । किन्तु उनके कारण विषयक विरोधका निराकरण करनेंके लिये इस अधिकारके द्वारा प्रत्यय अर्थात् कारणके विधान अर्थात् प्रपंच या भेदकी प्ररूपणा की जा रही है ।

नैगम, व्यवहार और संग्रहनयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीय वेदना प्राणातिपात प्रत्ययसे होती है ।। २ ।।

प्राणातिपातका अर्थ प्राणोंसे प्राणियोंका वियोग करना है । वह जिन मन, वचन या कायके

....

(१) अ-आप्रत्यो: 'अणुवत्तीए' इति पाठ: । (२) अ-आप्रत्यो: 'णादवेदव्वमिदि' इति पाठ: ।
(३) ताप्रतौ 'पाणादिवादो णाम' इत्येतावानयं पाठ: सूत्रान्तर्गतोऽस्ति ।

रादीहिंतो ते वि पाणादिवादो । के पाणा ? चक्खु-सोद-घाण-जिब्भा-पासिंदिय-मण-वयण-कायबलुस्सासणिस्सासाउआणि त्ति दस पाणा । पच्चओ कारणं णिमित्तमिच्चणत्थंतरं। पाणादिवादो च सो पच्चओ च पाणादिवादपच्चओ । पाणादिवादो णाम हिंसाविसयजीव-वावारो । सो च पज्जाओ । तदो ण सो कारणं, पज्जायस्स[1] एयंतस्स कारणत्तविरोहादो त्ति ? ण, पज्जायस्स पहाणीभूदस्स [2]आयड्ढियपरवक्खस्स कारणत्तुवलंभादो । तम्हि पाणादिवादपच्चए [3]णाणावरणीयवेयणा होदि । कधं पच्चयस्स सत्तमीए उप्पत्ती ? ण, पाणादिवादपच्चयविसए णाणावरणीयवेयणा वट्टदि त्ति संबंधिज्जमाणे सत्तमीविहत्तीए वइसइयाए उप्पत्तिं पडि विरोहाभावादो । अधवा तइयत्थे सत्तमी दट्ठव्वा । तधा च पाणादिवादपच्चएण णाणावरणीयवेयणा होदि त्ति सिद्धो सुत्तट्ठो । पाणादिवादो जदि णाणावरणीयबंधस्स पच्चओ होज्ज तो तिहुवणे ट्ठिदकम्मइयखंधा णाणावरणीयपच्चएण अक्कमेण किण्ण परिणमंते, कम्मजोगत्तं पडि विसेसाभावादो ? ण, तिहुवणब्भंतरकम्मइय-

....

व्यापारादिकोंसे होता है वे भी प्राणातिपात ही कहे जाते हैं ।

शंका – प्राण कौनसे हैं ?

समाधान – चक्षु, श्रोत्र, घ्राण, जिह्वा व स्पर्शन, ये पाँच इन्द्रियाँ, मन, वचन और काय, ये तीन बल, तथा उच्छ्वास-निःश्वास एवं आयु ये दस प्राण हैं ।

प्रत्यय, कारण और निमित्त, ये समानार्थक शब्द हैं । प्राणातिपात रूप जो प्रत्यय वह प्राणातिपातप्रत्यय, इस प्रकार यहाँ कर्मधारय समास है ।

शंका – प्राणातिपातका अर्थ हिंसा विषयक जीवका व्यापार है । वह चूँकि पर्याय स्वरूप है अतः वह कारण नहीं हो सकता, क्योंकि, एकान्त पर्यायके कारणताका विरोध है ?

समाधान – नहीं, क्योंकि, यहाँ पर्याय प्रधान है और परपक्ष आकर्षित होकर उसमें गृहीत है इसलिए उसे कारण माननेमें कोई विरोध नहीं है ।

उक्त प्राणातिपात प्रत्ययके होनेपर ज्ञानावरणीय वेदना होती है ।

शंका – प्रत्यय शब्दकी सप्तमी विभक्ति कैसे संगत है ?

समाधान – नहीं, क्योंकि, प्राणातिपात प्रत्ययके विषयमें ज्ञानावरणीय कर्मकी वेदना होती है, ऐसा सम्बन्ध करनेपर विषयार्थक सप्तमी विभक्तिकी उपपत्तिमें विरोध नहीं आता । अथवा, तृतीय विभक्तिके अर्थमें सप्तमी विभक्ति समझना चाहिये । इस प्रकार प्राणातिपात प्रत्ययसे ज्ञानावरणीय वेदना होती है, यह सूत्रका अर्थ सिद्ध होता है ।

शंका – यदि प्राणातिपात ज्ञानावरणीयके बन्धका कारण है तो तीनों लोकोंमें स्थित कार्मण स्कन्ध ज्ञानावरणीय पर्याय स्वरूपसे एक साथ क्यों नहीं परिणत होते है, क्योंकि, उनमें कर्मयोग्यताकी अपेक्षा समानता है ?

समाधान – नहीं, क्योंकि, तीनों लोकोंके भीतर स्थित कार्मण स्कन्धोंमें देश विषयक

....

(१) प्रतिषु 'पज्जत्तयस्स-' इति पाठः । (२) आप्रतौ 'आयदिय' शेषप्रत्योः 'आयट्टिय' इति पाठः ।
(३) अ-आप्रत्योः 'पच्चएहि' इति पाठः ।

खंधेहि देसविसयपच्चासत्तीए अभावादो । वुत्तं च--

एयक्खेत्तोगाढ सव्वपदेसेहि कम्मणो जोग्गं[1] ।
बंधइ जहुत्तहेदू सादियमहणादियं वा वि[2] ।। १ ।।

जदि एयक्खेत्तोगाढा कम्मइयखंधा पाणादिवादादो[3] कम्मपज्जाएण परिणमंति तो सव्वलोगगयजीवाणं पाणादिवादपच्चएण सव्वे कम्मइयखंधा अक्कमेण[4] णाणावरणीयपज्जाएण परिणदा होंति । ण च एवं, बिदियादिसमएसु कम्मइयखंधाभावेण सव्वजीवाणं णाणावरणीयबंधस्स अभावप्पसंगादो । ण च एवं, सव्वजीवाणं णिव्वाणगमणप्पसंगादो? एत्थ परिहारो वुच्चदे-पच्चासत्तीए एगोगाहणविसयाए संतीए वि ण सव्वे कम्मइयक्खंधा णाणावरणीयसरूवेण एगसमएण परिणमंति, पत्तं दज्झं दहमाणदहणम्मि व जीवम्मि तहाविहसत्तीए अभावादो । किं कारणं जीवम्मि तारिसी सत्ती णत्थि ? साभावियादो । कम्मइयक्खंधा किं जीवेण समवेदा संता णाणावरणीयपज्जाएण परिणमंति आहो असमवेदा[5]? णादिपक्खो, ओरालिय-वेउव्विय-आहार-तेजइयसरीरसण्णिदणोकम्मवदिरि-

....

प्रत्यासत्तिका अभाव है । कहा भी है --

सूक्ष्म निगोद जीवका शरीर घनांगुलके असंख्यातवें भागमात्र जघन्य अवगाहनाका क्षेत्र एक क्षेत्र कहा जाता है । उस एक क्षेत्रमें अवगाहको प्राप्त व कर्मस्वरूप परिणमनके योग्य सादि अथवा अनादि पुद्गल द्रव्यको जीव यथोक्त मिथ्यादर्शनादिक हेतुओंसे संयुक्त होकर समस्त आत्मप्रदेशोंके द्वारा बाँधता है ।। १ ।।

शंका - यदि एक क्षेत्रावगाहरूप हुए कार्मण स्कन्ध प्राणातिपातके निमित्तसे कर्म पर्यायरूप परिणमते हैं तो समस्त लोकमें स्थित जीवोंके प्राणातिपात प्रत्ययके द्वारा सभी कार्मण स्कन्ध एक साथ ज्ञानावरणीय रूप पर्यायसे परिणत हो जाने चाहिये । परन्तु ऐसा हो नहीं सकता, क्योंकि, वैसा होनेपर द्वितीयादिक समयोंमें कार्मण स्कन्धोंका अभाव हो जानेसे सब जीवोंके ज्ञानावरणीयका बन्ध न हो सकनेका प्रसंग आता है।किन्तु ऐसा सम्भव नहीं है, क्योंकि, इस प्रकारसे समस्त जीवोंके मुक्ति प्राप्तिका प्रसंग अनिवार्य है?

समाधान - उपर्युक्त शंकाका परिहार कहा जाता है - एक अवगाहनाविषयक प्रत्यासत्तिके होनेपर भी सब कार्मण स्कन्ध एक समयमें ज्ञानावरणीय स्वरूपसे नहीं परिणमते हैं, क्योंकि, प्राप्त इंधन आदि दाह्य वस्तुको जलानेवाली अग्निके समान जीवमें उस प्रकारकी शक्ति नहीं है ।

शंका - जीवमें वैसी शक्तिके न होनेका क्या कारण है ?

समाधान - उसमें वैसी शक्ति न होनेका कारण स्वभाव ही है ।

शंका - कार्मण स्कन्ध क्या जीवमें समवेत होकर ज्ञानावरणीय पर्यायरूपसे परिणमते हैं अथवा असमवेत होकर ? प्रथम पक्ष तो संभव नहीं है, क्योंकि, औदारिक, वैक्रियिक, आहारक

....

(१) अ-आप्रत्योः 'जोगं' इति पाठः । (२) गो०, क्र०, १८५ । (३) अ-आप्रत्योः 'पादोदो' इति पाठः ।
(४) आप्रतौ 'अक्कम्मेण' इति पाठः । (५) आप्रतौ 'असमदणादि-' इति पाठः ।

तस्स कम्मइयक्खंधस्स कम्मसरूवेण अपरिणदस्स जीवे समवेदस्स अणुवलंभादो । उवलंभे वा पत्तेयसरीरवग्गणाए ट्ठाणपरूवणाए कीरमाणाए ओरालिय-वेउव्विय-तेजा-कम्मइयसरीराणि अस्सिदूण जहा परूवणा कदा एवं जीवसमवेदकम्मइयखंधे वि अस्सिदूण ट्ठाणपरूवणा करेज्ज। ण च एवं, तहाणुवलंभादो । ण विदिओ[1] वि पक्खो जुज्जदे, जीवे असमवेदाणं कम्मइयक्खंधाणं[2] णाणावरणीययसरूवेण परिणमणविरोहादो । अविरोहे वा जीवो संसारावत्थाए अमुत्तो होज्ज, मुत्तदव्वेहि संबंधाभावादो । ण च एवं, जीवगमणे सरीरस्स संबंधाभावेण [3]अगमणप्पसंगादो, जीवादो पुधभूदं सरीरमिदि अणुहवाभावादो च । ण पच्छा दोण्णं पि संबंधो, कारणे अक्कमे संते कज्जस्स कमुप्पत्तिविरोहादो त्ति ? एत्थ परिहारो वुच्चदे-जीवसमवेदकाले चेव कम्मइयक्खंधा ण[4] णाणावरणीयसरूवेण परिणमंति (त्ति)ण पुव्वुत्तदोसा ढुक्कंति । कधमेगो णाणादिवादो अक्कमेण दोण्णं कज्जाणं संपादओ ? ण, एयादो मोग्गरादो घादावयवविभागट्ठाणसंचालणक्खेत्तंतरवत्ति[5] खप्परकज्जाणमक्कमेणुप्पत्तिदंसणादो । कधमेगो पाणादिवादो अणंते कम्मइय --

....

और तेजस शरीर संज्ञावाले नोकर्मसे भिन्न और कर्मस्वरूपसे अपरिणत हुआ कार्मण स्कन्ध जीव में समवेत नहीं पाया जाता । अथवा यदि पाया जाता है तो प्रत्येक शरीरकी वर्गणाके स्थानोंकी प्ररूपणा करते समय औदारिक, वैक्रियिक, तेजस और कार्मणशरीरका आश्रय करके जैसे प्ररूपणा की गई है, इस प्रकार जीव समवेत कार्मण स्कन्धोंका भी आश्रय करके स्थानप्ररूपणा करनी चाहिये थी । परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, वह पायी नहीं जाती । दूसरा पक्ष भी युक्तिसंगत नहीं है, क्योंकि, जीवमें असमवेत कार्मण स्कन्धोंके ज्ञानावरणीय स्वरूपसे परिणत होनेका विरोध है । यदि विरोध न माना जाय तो संसार अवस्थामें जीवको अमूर्त होना चाहिये, क्योंकि, मूर्त द्रव्योंसे उसका कोई सम्बन्ध नहीं है । परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, जीवके गमन करनेपर शरीरका सम्बन्ध न रहनेसे उसके गमन न करनेका प्रसंग आता है। दूसरे, जीवसे शरीर पृथक् है, ऐसा अनुभव भी नहीं होता । पीछे दोनोंका सम्बन्ध होता है, ऐसा भी सम्भव नहीं है, क्योंकि, कारणके क्रमरहित होनेपर कार्यकी क्रमिक उत्पत्तिका विरोध है ?

समाधान - यहाँ उक्त शंकाका परिहार करते हैं । यथा - जीवसे समवेत होनेके समयमें ही कार्मण स्कन्ध ज्ञानावरणीय स्वरूपसे नहीं परिणमते हैं । अतएव पूर्वोक्त दोष यहाँ नही ढूँकते ।

शंका - प्राणातिपात रूप एक ही कारण युगपत् दो कार्योंका उत्पादक कैसे हो सकता है ?

समाधान - नहीं, क्योंकि, एक मुद्गरसे घात, अवयवविभाग, स्थानसंचालन और क्षेत्रान्तरकी प्राप्तिरूप खप्पर कार्योंकी युगपत् उत्पत्ति देखी जाती है ।

शंका - प्राणातिपात रूप एक ही कारण अनन्त कार्मण स्कन्धोंको एक साथ ज्ञानावरणीय

....

(१) अ-आप्रत्योः 'बीइंदिओ' ताप्रतौ 'वीइज्जओ' इति पाठः । (२) ताप्रतौ नोपलभ्यते पदमिदम्।
(३) अप्रतौ 'आगमण' इति पाठः । (४) अ-आप्रत्योः 'कम्मइयक्खंधाण', ताप्रतौ 'कम्मइयक्खंधा (ण)' इति पाठः।
(५) अ-आप्रत्योः 'क्खेत्तंतरावेति' इति पाठः ।

क्खधे णाणावरणीयसरूवेण अक्कमेण परिणमावेदि, बहुसु एक्कस्स अक्कमेण वुत्ति-विरोहादो ? ण, एयस्स पाणादिवादस्स अणंतसत्तिजुत्तस्स तदविरोहादो ।

मुसावादपच्चए ॥ ३ ॥

असंतवयणं मुसावादो । किमसंतवयणं ? मिच्छत्तासंजम-कसाय-पमादुट्ठावियो वयणकलावो । एदम्हि मुसावादपच्चए मुसावादपच्चएण वा णाणावरणीयवेयणा जायदे । कम्मबंधो हि णाम सुहासुहपरिणामेहिंतो जायदे, सुद्धपरिणामेहिंतो तेसिं दोण्णं पि णिम्मूलक्खओ ।

ओदइया बंधयरा उवसम-खय-मिस्सया य मोक्खयरा ।
परिणामिओ दु भावो करणोहयवज्जियो होदि[1] ॥ २ ॥

इदिवयणादो । असंतवयणं पुण ण सुहपरिणामो, णो असुहपरिणामो, पोग्गलस्स तप्परिणामस्स वा जीवपरिणामत्तविरोहादो । णासंतवयणं णाणावरणीयबंधस्स कारणं । णासंतवयणकारणकसाय-पमादाणमसंतवयणववएसो, तेसिं कोह-माण-माया-लोहपच्चएसु अंतब्भावेण पउणरुत्तियप्पसंगादो । ण पाणादिवादपच्चओ वि, भिण्णजीव-

....

स्वरूपसे कैसे परिणमता है, क्योंकि, बहुतोंमें एककी युगपत् वृत्तिका विरोध है ?

समाधान - नहीं, क्योंकि, प्राणातिपात रूप एक ही कारणके अनन्त शक्तियुक्त होनेसे वैसा होनेमें कोई विरोध नहीं आता ।

मृषावाद प्रत्ययसे ज्ञानावरणीय वेदना होती है ॥ ३ ॥

असत् वचनका नाम मृषवाद है ।

शंका - असत् वचन किसे कहते हैं ?

समाधान - मिथ्यात्व, असंयम, कषाय और प्रमादसे उत्पन्न वचनसमूहको असत् वचन कहते हैं ।

इस मृषावाद प्रत्ययमें अथवा मृषावाद प्रत्ययके द्वारा ज्ञानावरणीय वेदना होती है ।

शंका - कर्मका बन्ध शुभ व अशुभ परिणामोंसे होता है और शुद्ध परिणामोंसे उन (शुभ व अशुभ) दोनोंका ही निर्मूल क्षय होता है, क्योंकि -

औदयिक भाव बन्धके कारण और औपशमिक, क्षायिक व मिश्र भाव मोक्षके कारण हैं । पारिणामिक भाव बन्ध व मोक्ष दोनोंके ही कारण नहीं हैं ॥ २ ॥

ऐसा आगमवचन हैं । परन्तु असत्य वचन न तो शुभ परिणाम है और न अशुभ परिणाम है, क्योंकि, पुद्गलके अथवा उसके परिणामके जीवपरिणाम होनेका विरोध है । इस कारण असत्य वचन ज्ञानावरणीयके बन्धका कारण नहीं हो सकता । यदि कहा जाय कि असत्य वचनके कारणभूत कषाय और प्रमादकी असत्य वचन संज्ञा है सो यह कहना भी ठीक नहीं है, क्योंकि, उनका क्रोध, मान, माया व लोभ प्रत्ययोंमें अन्तर्भाव होनेसे पुनरुक्ति दोषका प्रसंग आता है । इसी

....

(१) पु.७ पृ.९, क.पा. १ पृ.६. इति पाठः ।

विसयस्स पाण-पाणिविओगस्स[1] कम्मबंधहेउत्तविरोहादो । ण च पाण-पाणि[2] विओग-कारणजीवपरिणामो पाणादिवादो, तस्स राग-दोस-मोहपच्चएसु अंतब्भावेण पउणरुत्ति-यप्पसंगादो त्ति ? एत्थ परिहारो वुच्चदे-सव्वस्स कज्जकलावस्स कारणादो अभेदो सत्तादीहिंतो त्ति णए अवलंबिज्जमाणे कारणादो कज्जमभिण्णं, कज्जादो कारणं पि, असदकरणाद् उपादानग्रहणात् सर्वसंभवाभावात् शक्तस्य शक्यकरणात् कारणभावाच्च[3] । कारणे कार्यमस्तीति विवक्षातो वा कारणात्कार्यमभिन्नं । णाणावरणीयबंधणिबंधणपरिणाम-

....

प्रकार प्राणातिपात भी ज्ञानावरणीयका प्रत्यक नहीं हो सकता, क्योंकि, अन्य जीवविषयक प्राण-प्राणि-वियोगके कर्मबंधमें कारण होनेका विरोध है । यदि कहा जाय कि प्राण व प्राणीके वियोगका कारणभूत जीवका परिणाम प्राणातिपात कहा जाता है, सो यह भी ठीक नहीं है, क्योंकि, उसका राग, द्वेष एवं मोह प्रत्ययोंमें अन्तर्भाव होनेसे पुनरुक्ति दोषका प्रसंग आता है ।

समाधान - उपर्युक्त शंकाका परिहार कहा जाता है । यथा - सत्ता आदिकी अपेक्षा सभी कार्यकलापका कारणसे अभेद है, इस नयका अवलंबन करनेपर कारणसे कार्य अभिन्न है तथा कार्यसे कारण भी अभिन्न है, क्योंकि, असत् कार्य कभी किया नहीं जा सकता है, नियत उपादानकी अपेक्षा की जाती है, किसी एक कारणसे सभी कार्य उत्पन्न नहीं हो सकते, समर्थ कारणके द्वारा शक्य कार्य ही किया जाता है, तथा असत् कार्यके साथ कारणका संबंध भी नहीं बन सकता ।

विशेषार्थ - यहाँ कार्यका कारणके साथ अभेद बतलानेके लिये निम्न पाँच हेतु दिये गये हैं -- १) यदि कारणके साथ सत्ताकी अपेक्षा भी कार्यका अभेद न स्वीकार किया जाय तो कारणके द्वारा असत् कार्य कभी किया नहीं जा सकेगा, जैसे-खरविषाणादि । अतएव कारण-व्यापारके पूर्व भी कारणके समान कार्यको भी सत् ही स्वीकार करना चाहिये । इस प्रकार सत्ताकी अपेक्षा दोनोंमें कोई भेद नहीं रहता । २) दूसरा हेतु 'उपादानग्रहण' दिया गया है । उपादानग्रहणका अर्थ उपादान कारणोंके साथ कार्यका संबंध है । अर्थात् कार्यसे संबद्ध होकर ही कारण उसका जनक हो सकता है, न कि उससे असम्बद्ध रहकर भी । और चूँकि कारणका सम्बन्ध असत् कार्यके साथ सम्भव नहीं है, अतएव कारणव्यापारसे पहले भी कार्यको सत् स्वीकार करना ही चाहिये ३) अब यहाँ शंका उपस्थित होती है कि कारण अपनेसे असंबद्ध कार्यको उत्पन्न क्यों नहीं करते हैं ? इसके समाधानमें 'सर्वसम्भवाभाव' रूप यह तीसरा हेतु दिया गया है । अभिप्राय यह है कि यदि कारण अपनेसे असम्बद्ध कार्यके उत्पादक हो सकते हैं तो जिस प्रकार मिट्टीसे घट उत्पन्न होता है उसी प्रकार उससे पट आदि अन्य कार्य भी उत्पन्न हो जाने चाहिये, क्योंकि, मिट्टीका जैसे पट आदिसे कोई सम्बन्ध नहीं है वैसे ही घटसे भी उसका कोई सम्बन्ध नहीं है । इस प्रकार सब कारणोंसे सभी कार्योंके उत्पन्न होने रूप जिस अव्यवस्थाका प्रसंग आता है उस अव्यवस्थाको टालनेके लिए मानना पडेगा कि घट मिट्टीमें कारणव्यापारके पूर्व भी सत् ही था । वह केवल कारणव्यापारसे अभिव्यक्त किया जाता है । ४) पुनः शंका उपस्थित होती है कि असम्बद्ध रहकर भी कारण जिस

....

(१) अ-आप्रत्योः 'विसयोगस्त' ताप्रतौ 'वियोगस्स' इति पाठः । (२) प्रतिषु 'वियोग' इति पाठः ।
(३) असदकरणादुपादानग्रहणात् सर्वसम्भवाभावात् । शक्तस्य शक्यकरणात् कारणभावाच्च सत्कार्यम्।। सांख्यकारिका ९ ।

जणिदो वियोगो वयणकलावो च । तम्हा तदो तेसिमभेदो । तेणेव कारणेण णाणावरणीयबंधस्स तेसिं पच्चयत्तं पि सिद्धं । एवंविहववहारो किमट्ठं कीरदे ? सुहेण णाणावरणीयपच्चयपडिबोहणट्ठं कज्जपडिसेहदुवारेण कारणपडिसेहट्ठं च ।

अदत्तादाणपच्चए ।। ४ ।।

अदत्तस्स अदिण्णस्स आदाणं गहणं अदत्तादाणं[1] सो चेव पच्चओ अदत्तादाण-पच्चओ, तम्हि अदत्तादाणपच्चयविसए णाणावरणीयवेयणा होदि । एत्थ वि जेण 'आदीयदे अणेण आदीयद इदि आदाणं' तेण अदिण्णत्थो तग्गहणपरिणामो च अदत्तादाणं । ण च पाणादिवाद-मुसावाद-अदत्तादाणाणमंतरंगाणं कोधादिपच्चएसु

....

कार्यके उत्पादनमें समर्थ है उसे ही उत्पन्न करेगा, न कि अन्य अशक्य कार्योंको । अतएव उपर्युक्त अव्यवस्थाकी सम्भावना नहीं है ? इसके उत्तरमें 'समर्थ कारणके द्वारा शक्य ही कार्य किया जाता है' यह चतुर्थ हेतु दिया गया है । अर्थात् कारणमें विद्यमान कार्यजनन रूप शक्ति यदि सर्व कार्यविषयक है तब तो उपर्युक्त अव्यवस्था ज्योंकी त्यों बनी रहती है । परन्तु यदि वह शक्ति शक्य विवक्षित घटादि कार्यविषयक ही है तो भला अविद्यमान घटादि कार्योमें उक्त शक्तिकी सम्भावना ही कैसे की जा सकती है ? अतएव उक्त अव्यवस्थाके निवारणार्थ कार्यको 'सत्' ही स्वीकार करना चाहिये । ५) पाँचवाँ हेतु 'कारणभाव' है । इसका अभिप्राय यह है कि कार्य चूँकि कारणात्मक ही है, उससे भिन्न नहीं है, अतएव सत् कारणसे अभिन्न कार्य कभी असत् नहीं हो सकता । इस प्रकार इन पाँच हेतुओंके द्वारा कार्यके 'सत्' सिद्ध हो जानेपर सत्तादिक धर्मोकी अपेक्षा कार्य अपने कारणसे स्वयमेव अभिन्न सिद्ध हो जाता है।

अथवा 'कारणमें कार्य है' इस विवक्षासे भी कारणसे कार्य अभिन्न है । प्रकृतमें प्राणप्राणिवियोग और वचनकलाप चूँकि ज्ञानावरणीयबन्धके कारणभूत परिणामसे उत्पन्न होते हैं, अतएव वे उससे अभिन्न हैं । इसी कारण वे ज्ञानावरणीयबन्धके प्रत्यय भी सिद्ध होते हैं ।

शंका – इस प्रकारका व्यवहार किसलिये किया जाता है ?

समाधान – सुखपूर्वक ज्ञानावरणीयके प्रत्ययोंका प्रतिबोध करानेके लिये तथा कार्यके प्रतिषेध द्वारा कारणका प्रतिषेध करनेके लिये भी उपर्युक्त व्यवहार किया जाता है ।

अदत्तादान प्रत्ययसे ज्ञानावरणीय वेदना होती है ।। ४ ।।

अदत्त अर्थात् नहीं दिये गये पदार्थका आदान अर्थात् ग्रहण करना 'अदत्तादान' है । अदत्तादान ऐसा जो वह प्रत्यय अदत्तादानप्रत्यय, इस प्रकार यहाँ कर्मधारय समास है । उस अदत्तादान प्रत्ययके विषयमें ज्ञानावरणीय वेदना होती है । यहाँ भी चूँकि 'जिसके द्वारा ग्रहण किया जाय या जो ग्रहण किया जाय' इस प्रकार आदान शब्दकी निरुक्ति की गई है, अतएव उससे अदत्त पदार्थ और उसके ग्रहण करनेका परिणाम दोनोंही अदत्तादान ठहरते हैं । प्राणातिपात, मृषावाद और अदत्तादान इन अन्तरंग प्रत्ययोंका क्रोधादिक प्रत्ययोंमें अन्तर्भाव नहीं हो सकता ।

....

(१) अ-आप्रत्योः 'अदत्तादाणगहणं' ताप्रतौ 'अदत्तादाणं (गहणं)', इति पाठः ।

अंतब्भावो, कधंचि तत्तो[1] तेसिं भेदुवलंभादो । एत्थ [2]बज्झगत्थाणं पुव्वं पच्चयत्तं परूवेदव्वं। ण च पमादेण विणा तियरणसाहणट्ठं गहिदबज्झट्ठो णाणावरणीयपच्चओ, पच्चयादो अपुप्पण्णस्स पच्चयत्तविरोहादो ।

मेहुणपच्चए ।। ५ ।।

त्थी-पुरिसविसयवावारो मण-वयण-कायसरूवो मेहुणं । तेण मेहुणपच्चएण णाणावरणीयवेयणा जायदे । एत्थ वि अंतरंगमेहुणस्सेव बहिरंगमेहुणस्स आसवभावो वत्तव्वो। ण च मेहुणं अंतरंगरागे णिपददि, तत्तो कधंचि एदस्स भेदुवलंभादो ।

परिग्गहपच्चए ।। ६ ।।

परिगृह्यत इति परिग्रहः बाह्यार्थः क्षेत्रादिः, परिगृह्यते अनेनेति वा परिग्रहः बाह्यार्थ-ग्रहणहेतुरत्र परिणामः । एदेहि परिग्गहेहि णाणावरणीयवेयणा समुप्पज्जदे । एत्थ बहिरंगस्स परिग्गहस्स पुव्वं व पच्चयभावो वत्तव्वो ।

रादिभोयणपच्चए ।। ७ ।।

भुज्यत इति भोजनमोदनः भुक्तिकारणपरिणामो वा भोजनं । रत्तीए भोयणं

....

क्योंकि, उनसे इनका कथंचित् भेद पाया जाता है । यहाँ बाह्य पदार्थोंको पूर्वमें प्रत्यय बतलाना चाहिये। इसका कारण यह है कि प्रमादके बिना रत्नत्रयको सिद्ध करनेके लिये ग्रहण किया गया बाह्य पदार्थ ज्ञानावरणीयके बन्धका प्रत्यय नहीं हो सकता, क्योंकि, जो प्रत्ययसे उत्पन्न नहीं हुआ है उसे प्रत्यय स्वीकार करना विरुद्ध हैं ।

मैथुन प्रत्ययसे ज्ञानावरणीय वेदना होती है ।। ५ ।।

स्त्री और पुरुषके मन, वचन काय स्वरूप विषयव्यापारको मैथुन कहा जाता है । उस मैथुनप्रत्ययके द्वारा ज्ञानावरणीयकी वेदना होती है । यहाँपर भी अन्तरंग मैथुनके ही समान बहिरंग मैथुनको भी कारण बतलाना चाहिये । मैथुन अन्तरंग रागमें गर्भित नहीं होता, क्योंकि, उससे इसमें कथंचित् भेद पाया जाता है ।

परिग्रह प्रत्ययसे ज्ञानावरणीय वेदना होती है ।। ६ ।।

'परिगृह्यते इति परिग्रहः' अर्थात् जो ग्रहण किया जाता है । इस निरुक्तिके अनुसार क्षेत्रादि रूप बाह्य पदार्थ परिग्रह कहा जाता है, तथा 'परिगृह्यते अनेनेति परिग्रहः' जिसके द्वारा ग्रहण किया जाता है वह परिग्रह है, इस निरुक्तिके अनुसार यहाँ बाह्य पदार्थके ग्रहणमें कारणभूत परिणाम परिग्रह कहा जाता है । इन दोनों प्रकारके परिग्रहोंसे ज्ञानावरणीयकी वेदना उत्पन्न होती है । यहाँ बहिरंग परिग्रहको पहलेके समान कारण बतलाना चाहिये ।

रात्रिभोजन प्रत्ययसे ज्ञानावरणीय वेदना होती है ।। ७ ।।

भुज्यते इति भोजनम्' अर्थात् जो खाया जाता है वह भोजन है, इस निरुक्तिके अनुसार

....

(१) अ-आप्रत्योः 'कथंचिदत्तो', आप्रतौ 'कथंचिददत्तो' इति पाठः ।

(२) मप्रतिपाठोऽयम् । अ-आप्रत्योः बज्झगंधाणं', ताप्रतौ 'बज्झगंधा (था) णं' इति पाठः ।

रादिभोयणं । तेण रादिभोयणपच्चएण णाणावरणीयवेयणा समुप्पज्जदे । जेणेदं सुत्तं देसामासियं तेणेत्थ महु-मांस-पंचुंबर-णिंवसण-हुल्ल[1] भक्खण-सुरापाण-अवेलासणादीणं पि णाणावरणपच्चयत्तं परूवेदव्वं । एवमसंजमपच्चओ परूविदो । संपहि कसायपच्चयपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि -

एवं कोह-माण-माया-लोह-राग-दोस-मोह-पेम्मपच्चए ।।८।।

हृदयदाहांगकंपाक्षिरागेन्द्रियापाटवादि[2] निमित्तजीवपरिणाम: क्रोध: विज्ञानैश्वर्य-जाति-कुल-तपो-विद्याजनितो जीवपरिणाम: औद्धत्यात्मको मान: । स्वहृदय-प्रच्छादानार्थमनुष्ठानं माया । बाह्यार्थेसु ममेदं बुद्धिर्लोभ: । माया-लोभ-वेदत्रय-हास्य रतयो राग: । क्रोध मानारति-शोक-जुगुप्सा-भयानि द्वेष: । क्रोध-मान-माया-लोभ-हास्य-रत्यरति-शोक-भय-जुगुप्सा स्त्री-पुं-नपुंसकवेद-मिथ्यात्वानां समूहो मोह: । मोहपच्चयो कोहादिसु पविसदि त्ति किण्णावणिज्जदे ? ण, अवयवावयवीणं

....

ओदनको भोजन कहा गया है । अथवा (भुज्यते अनेनेति भोजनम्) इस निरुक्तिके अनुसार आहारग्रहणके कारणभूत परिणामको भी भोजन कहा जाता है । रात्रिमें भोजन रात्रिभोजन, इस प्रकार यहां तत्पुरुष समास है । उक्त रात्रिभोजन प्रत्ययसे ज्ञानावरणीयकी वेदना उत्पन्न होती है । चूँकि यह सूत्र देशामर्शक है, अत: उससे यहाँ मधु, माँस, पाँच उदुम्बर फल, निन्द्य भोजन और फूलोंके भक्षण, मद्यपान तथा असामयिक भोजन आदिको भी ज्ञानावरणीयका प्रत्यय बतलाना चाहिये । इस प्रकार असंयम प्रत्ययकी प्ररूपणा की गई । अब कषाय प्रत्ययकी प्ररूपणाके लिये आगेका सूत्र कहा जाता है --

इसी प्रकार क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, मोह और प्रेम प्रत्ययोंसे ज्ञानावरणीय वेदना होती है ।। ८ ।।

हृदयदाह, अंगकम्प, नेत्ररक्तता और इंद्रियोंकी अपटुता आदिके निमित्तभूत जीवके परिणामको क्रोध कहा जाता है । विज्ञान, ऐश्वर्य, जाति, कुल, तप और विद्या इनके निमित्तसे उत्पन्न उद्धतता रूप जीवका परिणाम मान कहलाता है । अपने हृदयके विचारको छुपानेकी जो चेष्टा की जाती है उसे माया कहते हैं । बाह्य पदार्थोमें जो 'यह मेरा है' इस प्रकार अनुराग रूप बुद्धि होती है उसे लोभ कहा जाता है। माया, लोभ, तीन वेद, हास्य और रति इनका नाम राग है । क्रोध, मान, अरति, शोक, जुगुप्ता और भय, इनको द्वेष कहा जाता है । क्रोध, मान, माया, लोभ, हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद नपुंसकवेद और मिथ्यात्व इनके समूहका नाम मोह है ।

शंका – मोहप्रत्यय चूँकि क्रोधादिकमें प्रविष्ट है अतएव उसे कम क्यों नही किया जाता है ?

समाधान – नहीं, क्योंकि, क्रमशः व्यतिरेक व अन्वय स्वरूप, अनेक व एक संख्यावाले,

....

(१) आप्रतौ 'कुल्ल', इति पाठः । (२) ताप्रतौ 'रागेंद्रियपाटवादि' इति पाठः ।

वदिरेगण्णयसरूवाणमणेगेगसंखाणं कारण-कज्जाणं एगाणेगसहावाणमेगत्तविरोहादो । प्रियत्वं प्रेम । एदेसु पादेक्कं पच्चयसद्दो जोजणीयो कोहपच्चए माणपच्चए मायपच्चए लोहपच्चए रागपच्चए दोसपच्चए मोहपच्चए पेम्मपच्चए त्ति । एदेहि पच्चएहि णाणावरणीयवेयणा समुप्पज्जदे । पेम्मपच्चयो लोभ-रागपच्चएसु पविसदि त्ति पुणरुत्तो किण्ण जायदे ? ण, तेहिंतो एदस्स कथंचि भेदुवलंभादो । तं जहा-बज्झत्थेसु ममेदं भावो लोभो । ण सो पेम्मं, ममेदं बुद्धीए अपडिग्गहिदे वि दक्खाहले परदारे वा पेम्मुवलंभादो । ण रागो पेम्मं, माया-लोह-हस्स-रदि-पेम्मसमूहस्स रागस्स अवयविणो अवयवसरूवपेम्मत्तविरोहादो ।

णिदाणपच्चए ।। ९ ।।

चक्कवट्टि-बल णारायण-सेट्ठि-सेणावइपदादिपत्थणं णिदाणं । सो पच्चओ, पमादमूलत्तादो मिच्छत्ताविणाभावादो वा । तेण णाणावरणीयवेयणा संपज्जदे । ण च एसो पच्चओ मिच्छत्तपच्चए पविसदि, मिच्छत्तसहचारिस्स मिच्छत्तेण एयत्तविरोहादो । ण पेम्मपच्चए पविसदि, संपयासंपयविसयम्मि पेम्मम्मि संपयविसयम्मि णिदाणस्स पवेस-विरोहादो । किमट्ठं पुधसुत्तारंभो ? मिच्छत्त-कोह-माण-माया-लोभ-राग-दोस-मोह-

....

कारण व कार्य रूप तथा एक व अनेक स्वभावसे संयुक्त अवयव अवयवीके एक होनेका विरोध है ।

प्रियताका नाम प्रेम है । इनमेंसे प्रत्येकमें प्रत्यय शब्दको जोडना चाहिये-क्रोधप्रत्यय, मानप्रत्यय, मायाप्रत्यय, लोभप्रत्यय, रागप्रत्यय, द्वेषप्रत्यय और प्रेमप्रत्यय इनके द्वारा ज्ञानावरणीयकी वेदना उत्पन्न होती है ।

शंका - चूँकि प्रेमप्रत्यय लोभ व रागप्रत्ययोंमें प्रविष्ट है अत: वह पुनरुक्त क्यों न होगा ?

समाधान - नहीं, क्योंकि, उनसे इसका कथंचित् भेद पाया जाता है । वह इस प्रकारसे बाह्य पदार्थोंमें 'यह मेरा है' इस प्रकारके भावको लोभ कहा जाता है । वह प्रेम नहीं हो सकता, क्योंकि, 'यह मेरा है' ऐसी बुद्धिके अविषयभूत भी द्राक्षाफल अथवा परस्त्रीके विषयमें प्रेम पाया जाता है, राग भी प्रेम नहीं हो सकता, क्योंकि, माया लोभ, हास्य, रति और प्रेमके समूह रूप अवयवी कहलानेवाले रागके अवयव स्वरूपका प्रेम रूप होनेका विरोध है ।

निदान प्रत्ययसे ज्ञानावरणीय वेदना होती है ।। ९ ।।

चक्रवर्ती, बलदेव, नारायण, श्रेष्ठी और सेनापति आदि पदोंकी प्रार्थना अर्थात् अभिलाषा करना निदान है । वह प्रमादमूलक अथवा मिथ्यात्वका अविनाभावी होनेसे प्रत्यय है । उससे ज्ञानावरणीयकी वेदना उत्पन्न होती है । यह प्रत्यय मिथ्यात्व प्रत्ययमें प्रविष्ट नहीं होता, क्योंकि, वह मिथ्यात्वका सहचारी (अविनाभावी) है, अत: मिथ्यात्वके साथ उसकी एकताका विरोध है । वह प्रेमप्रत्ययमें भी प्रविष्ट नहीं होता, क्योंकि, प्रेम सम्पत्ति एवं असंपत्ति दोनोंका विषय करनेवाला है, परन्तु निदान केवल संपत्तिको ही विषय करता है, अत एव उसका प्रेममें प्रविष्ट होना विरुद्ध है ।

शंका - निदान प्रत्ययकी प्ररूपणाके लिये पृथक् सूत्र किसलिये रचा गया है ?

पेम्मादिमूलो अणंतसंसारकारणो णिदाणपच्चओ त्ति जाणावणट्ठं पुध सुत्तारंभो कदो ।

अब्भक्खाण-कलह-पेसुण्ण-रइ-अरइ-उवहि-णियदि[1] माण-माय[2] मोस-मिच्छणाण-मिच्छदंसण-पओअपच्चए ।। १० ।।

क्रोध-मान-माया-लोभादिभिः परेष्वविद्यमानदोषोद्भावनमभ्याख्यानम् क्रोधादिवशादसि-दंडासभ्यवचनादिभिः परसन्तापजननं कलहः परेषां क्रोधादिना दोषोद्भावनं पैशून्यम् । नप्तृ-पुत्र-कलत्रादिषु रमणं रतिः । तत्प्रतिपक्षा अरतिः । उपेत्य क्रोधादयो धीयंते अस्मिन्निति उपधिः, क्रोधाद्युत्पत्तिनिबन्धनो बाह्यार्थ उपधिः । सोऽपि ज्ञानावरणीय-बन्धनिबन्धनः, तेन विना कषायाभावतो बन्धाभावात् । निक्रतिर्वञ्चना, मणि-सुवर्ण-रूप्याभासदानतो द्रव्यान्तरादानं निकृतिरित्यर्थः । मानं प्रस्थादिः हीनाधिकभावमापन्नः । सोऽपि कूटव्यवहारहेतुत्वाद् त्ज्ञानावरणीयस्य प्रत्ययः । मेयो यव-गोधूमादिः । सोऽपि ज्ञानावरणीयस्य प्रत्ययः, मातुरसद्व्यवहारस्य निबन्धनत्वात् । कधं मेयस्य मायत्वम् ? नैष दोषः ।

....

समाधान - मिथ्यात्व, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, मोह और प्रेम आदिके निमित्तसे होनेवाला निदान प्रत्यय अनन्त संसारका कारण है; यह बतलानेके लिए पृथक् सूत्रकी रचना की गई है ।

अभ्याख्यान, कलह, पैशून्य, रति, अरति, उपधि, निकृति, मान, माया, मोष, मिथ्याज्ञान, मिथ्यादर्शन और प्रयोग इन प्रत्ययोंसे ज्ञानावरणीय वेदना होती है ।। १० ।।

क्रोध, मान, माया और लोभ आदिके कारण दूसरोंमें अविद्यमान दोषोंको प्रगट करना अभ्याख्यान कहा जाता है । क्रोधादिके वश होकर तलवार, लाठी और असभ्य वचनादिके द्वारा दूसरोंको सन्ताप उत्पन्न करना कलह कहलाता है । क्रोधादिके कारण दूसरोंके दोषोंको प्रगट करना पैशून्य है । नाती, पुत्र एवं स्त्री आदिकोंमें रमण करनेका नाम रति है । इसकी प्रतिपक्षभूत अरति कही जाती है । 'उपेत्य क्रोधादयो धीयन्त अस्मिन् इति उपधिः' अर्थात् आकरके क्रोधादिक जहाँ पर पुष्ट होते हैं उसका नाम उपधि है, इस निरुक्तिके अनुसार क्रोधादि परिणामोंकी उत्पत्तिमें निमित्तभूत बाह्य पदार्थको उपधि कहा गया है । वह भी ज्ञानावरणीयके बन्धका कारण है, क्योंकि, उसके बिना कषायरूप परिणामका अभाव होनेसे बन्ध नहीं हो सकता । निकृतिका अर्थ धोखा देना है, अभिप्राय यह है कि नकली मणि, सुवर्ण, चाँदी देकर द्रव्यान्तरको प्राप्त करना निकृति कही जाती है । हीनता व अधिकताको प्राप्त प्रस्थ (एक प्रकारका माप) आदि मान कहलाते हैं । वे भी कूट अर्थात् असत्य व्यवहारके कारण होनेसे ज्ञानावरणीयके प्रत्यय हैं । मापनेके योग्य जौ और गेहूं आदि मेय कहे जाते हैं । वे भी ज्ञानावरणीयके प्रत्यय हैं, क्योंकि, वे मापनेवालेके असत्य व्यवहारके कारण हैं ।

शंका - मेयके स्थानमें माय शब्दका प्रयोग कैसे किया गया है ?

....

(१) अ-आप्रत्योः 'णयरदि', इति पाठः । (२) आ-ताप्रत्योः 'माया' इति पाठः ।

'एए छच्च समाणा दोण्णि य संझक्खरा सरा अट्ठ ।
अण्णोण्णस्स परोप्परमुवेंति सव्वे समावेसं[1] ।। ३ ।।

इत्यनेन सूत्रेण प्राकृते एकारस्य आकारविधानात् । मोषस्तेय: । ण मोसो अदत्तादाणे पविस्सदि, हृदपदिदपमुक्क[2] णिहिदादाणविसयम्मि अदत्तादाणम्मि एदस्स पवेस[3] विरोहादो। बौद्ध–नैयायिक सांख्य–मीमांसक–चार्वाक–वैशेषिकादिदर्शनरुच्यनुविद्धं ज्ञानं मिथ्याज्ञानम्। मिच्छत्त–सम्मामिच्छत्ताणि[4] मिच्छदंसणं । मण–वचि–कायजोगा[5] पओओ । एदेहि सव्वेहि णाणावरणीयवेयणा समुप्पज्जदे । कोध–माण–माया–लोभ–राग–दोस–मोह–पेम्म–णिदाण–अब्भक्खाण–कलह–पेसुण्ण–रदि–अरदि–उवहि–णियदि–माण–माया–मोसेहि कसायपच्चओ परूविदो । मिच्छणाण–मिच्छदंसेणेहि मिच्छत्तपच्चओ णिद्दिट्ठो । पओऐण जोगपच्चओ परूविदो । पमादपच्चओ एत्थ किण्ण वुत्तो ? ण, एदेहिंतो बज्झपमादाणुवलंभादो। कधमेयं कज्जमणेगेहिंतो उप्पज्जदे ? ण, एगादो कुंभारादो उप्पण्णघडस्स अण्णादो किं उप्पत्तिदंसणादो । पुरिसं पडि पुध पुध उप्पज्जमाणा कुंभोदंचण–

....

समाधान – 'यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, अ, आ, इ, ई, उ, और ऊ, ये छह स्वर और ए व ओ, ये दो सन्ध्यक्षर, इस प्रकार ये सब आठ स्वर परस्पर आदेशको प्राप्त होते हैं ।। ३ ।।'

इस सूत्रसे प्राकृतमें एकारके स्थानमें आकार किया गया है ।

मोषका अर्थ चोरी है । यह मोष अदत्तादानमें प्रविष्ट नहीं होता, क्योंकि हृत, पतित प्रमुक्त और निहित पदार्थके ग्रहणविषयक अदत्तादानमें उसके प्रवेशका विरोध है । बौद्ध, नैयायिक, सांख्य, मीमांसक, चार्वाक और वैशेषिक आदि दर्शनोंकी रुचिसे सम्बद्ध ज्ञान मिथ्याज्ञान कहलाता है । मिथ्यात्व व सम्यग्मिथ्यात्व भी मिथ्यादर्शन है । मन, वचन एवं कायरूप योगोंको प्रयोग शब्दसे ग्रहण किया गया है। इन सबोंसे ज्ञानावरणीयकी वेदना उत्पन्न होती है। क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, मोह, प्रेम, निदान, अभ्याख्यान, कलह, पैशून्य, रति, अरति, उपाधि, निकृति, मान, मेय, और मोष, इनसे कषाय प्रत्ययकी प्ररूपणा की गई है । मिथ्याज्ञान और मिथ्यादर्शनसे मिथ्यात्व प्रत्ययकी प्ररूपणा की गई है । प्रयोगसे योग प्रत्ययकी प्ररूपणा की गई है ।

शंका – यहाँ प्रमाद प्रत्यय क्यों नहीं बतलाया गया है ?

समाधान – नहीं, क्योंकि, इन प्रत्ययोंसे बाह्य प्रमाद प्रत्यय पाया नहीं जाता ।

शंका – एक कार्य अनेक कारणोंसे कैसे उत्पन्न होता है ?

समाधान – नहीं, क्योंकि, एक कुम्भकारसे उत्पन्न किये जानेवाले घटकी उत्पत्ति अन्यसे भी देखी जाती है । यदि कहा जाय कि पुरुषभेदसे पृथक् पृथक् उत्पन्न होनेवाले कुंभ, उदच्चन

....

(१) क.पा.१, पृ.३२६ तत्र 'अण्णोण्णस्स परोप्परं' इत्येतस्य स्थाने 'अण्णोण्णस्सविरोहा' इति पाठ: । (२) अ–आप्रत्यो: 'पम्मुइ', ताप्रतौ 'पण्णइ' इति पाठ: । (३) अ–आप्रत्यो: 'पदेस' इति पाठ: । (४) अ–आप्रत्यो: 'मिच्छत्ता मिच्छ–', ताप्रतौ 'मिच्छत्ताणि मिच्छा–' इति पाठ: । (५) ताप्रतौ 'कायजोवा (गा)' इति पाठ: ।

सरावादओ दीसंति त्ति चे ? ण, एत्थ वि कमभाविकोधादीहिंतो उप्पज्जमाणणाणावरणीयस्स दव्वादिभेदेण भेदुवलंभादो । णाणावरणीयसमाणत्तणेण तदे[1] क्कं चे ? ण, बहूहिंतो समुप्पज्जमाणघडाणं पि घडभावेण एयत्तुवलंभादो । होदु णाम णाणावरणीयस्स एदे पच्चया णइगम-ववहारणएसु, ण संगहणए, तत्थ उवहारिदासेसकज्जकारणकलावे कारणभेदाणुववत्तीदो ? ण, संगहम्मि पहाणीकयम्मि संगहिदासेसविसेसम्हि कज्ज-कारणभेदुववत्तीदो ।

एव सत्तण्णं कम्माणं ।। ११ ।।

जहा णाणावरणीयस्स पच्चयपरूवणा कदा तहा सेससत्तण्णं पि कम्माणं पच्चयपरूवणा कायव्वा, विसेसाभावादो । मिच्छत्तासंजम-कसाय-जोगपच्चएहि परिणयजीवेण सह एगोगाहणाए ट्ठिदकम्मइयवग्गणाए पोग्गलक्खंधा एयसरूवा कधं जीवसंबंधेण अट्ठभेदमाढउक्कंते ? ण, मिच्छत्तासंजम- कसाय-जोगपच्चया[2] वट्ठंभबलेण समुप्पण्णट्ठसत्तिसंजुत्तजीवसंबंधेण कम्मइयपोग्गलक्खंधाणं अट्ठकम्मायारेण परिणमणं पडि विरोहाभावादो।

....

व शराब आदि भिन्न कार्य देखे जाते हैं तो उसके उत्तरमें कहा जा सकता है कि यहाँ भी क्रमभावी क्रोधादिकोंसे उत्पन्न होनेवाले ज्ञानावरणीय कर्मका द्रव्यादिकके भेदसे भेद पाया जाता है ।

शंका – ज्ञानावरणीयत्वकी समानता होनेसे क्या वह (अनेक भेद रूप होकर भी) एक ही है ?

समाधान – इसके उत्तरमें कहते हैं कि इस प्रकार यहाँ भी बहुतोंके द्वारा उत्पन्न किये जानेवाले घटोंके भी घटत्व रूपसे अभेद पाया जाता है ।

शंका – नैगम और व्यवहार नयकी अपेक्षा ये भले ही ज्ञानावरणीयके प्रत्यय हों, परन्तु संग्रह नयकी अपेक्षा वे उसके प्रत्यय नहीं हो सकते, क्योंकि, उसमें समस्त कार्य-कारण समूहका उपसंहार होंनेसे कारणभेद बन नहीं सकता ?

समाधान – नहीं, क्योंकि, संग्रह नयको प्रधान करनेपर समस्त विशेषोंका संग्रह होते हुए भी कार्य-कारणभेद बन जाता है ।

इसी प्रकार शेष सात भी कर्मोंमे प्रत्ययोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये ।। ११ ।।

जैसे ज्ञानावरणीय कर्मके प्रत्ययोंकी प्ररूपणा की गई है वैसे ही शेष सात कर्मोंके भी प्रत्ययोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है ।

मिथ्यात्व, असंयम, कषाय और योग प्रत्ययोंसे परिणत जीवके साथ एक अवगाहनामें स्थित कार्मण वर्गणाके पौद्‌गलिक स्कन्ध एकस्वरूप होते हुए जीवके सम्बन्धसे कैसे आठ भेदको प्राप्त होते हैं ?

समाधान – नहीं, क्योंकि, मिथ्यात्व, असंयम, कषाय और योगरूप प्रत्ययोंके आश्रयसे उत्पन्न हुई आठ शक्तियोंसे संयुक्त जीवके संबंधसे कार्मण पुद्‌गल-स्कन्धोंका आठ कर्मोंके आकारसे परिणमन होनेमें कोई विरोध नहीं है ।

....

(१) अप्रतौ 'चेव उप्पज्जदि त्त चे ? ण', इति पाठः । (२) प्रतिषु 'पज्जाया' इति पाठः ।

उज्जुसुदस्स णाणावरणीयवेयणा जोगपच्चए पयडिपदेसग्गं ॥१२॥

पयडिपदेसग्ग-जादणाणावरणीयवेयणा जोगपच्चए जोगपच्चएण होदि, पयडिपदेसग्गमिदि किरियाविसेसणत्तेण अब्भुवगदत्तादो । ण च जोगवड्ढि-हाणीयो मोत्तूण अण्णेहिंतो णाणावरणीयपदेसग्गस्स वड्ढिं हाणिं[1] वा पेच्छामो । तम्हा णाणावरणीयपदेसग्गवेयणा जोगपच्चएण होदु णाम, ण पयडिवेयणाजोगपच्चएण होदि, तत्तो तिस्से वड्ढिहाणीणमणुवलंभादो त्ति भणिदे - ण, जोगेण[2] विणा णाणावरणीयपयडीए पादुब्भावादंसणादो[3]। जेण विणा जं णियमेण णोवलब्भदे तं तस्स कज्जमियरं च कारणमिदि सयलणइयाइयअजणप्पसिद्धं । तम्हा पदेसग्गवेयणा व[4] पयडिवेयणा वि जोगपच्चएणे त्ति सिद्धं ।

कसायपच्चए ट्ठिदि-अणुभागवेयणा ॥ १३ ॥

णाणावरणीयट्ठिदिवेयणा अणुभागवेयणा च कसायपच्चएण होदि, कसायवड्ढिहाणीहिंतो ट्ठिदि-अणुभागाणं वड्ढि-हाणिदंसणादो । ण पाणादिवाद-मुसावादादत्तादाणमेहुण-परिग्गह-रादिभोयणपच्चए णाणावरणीयं बज्झदि, तेण विणा वि अप्पत्तसंजदादिसु

....

ऋजुसूत्र नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयकी वेदना योगप्रत्ययसे प्रकृति व प्रदेशाग्ररूप होती है ॥ १२ ॥

प्रकृति व प्रदेशाग्र स्वरूपसे उत्पन्न ज्ञानावरणीयकी वेदना योगप्रत्ययके विषयमें अर्थात् योग प्रत्ययसे होती है, क्योंकि, 'पयडि-पदेसग्गं' इस पदको सूत्रमें क्रियाविशेषण रूप स्वीकार किया गया है ।

शंका -- चूँकि योगोंकी वृद्धि अथवा हानिको छोडकर अन्य कारणोंसे ज्ञानावरणीयके प्रदेशाग्रकी हानि अथवा वृद्धि नहीं देखी जाती है, अतएव ज्ञानावरणीयकी प्रदेशाग्रवेदना भले ही योगप्रत्ययसे हो, परन्तु उसकी प्रकृतिवेदना योगप्रत्ययसे नहीं हो सकती, क्योंकि, उससे इसकी प्रकृतिवेदनाकी वृद्धि व हानि नहीं पायी जाती है ।

समाधान -- इस शंकाके उत्तरमें कहते हैं कि ऐसा नहीं है, क्योंकि, विना ज्ञानावरणीयकी प्रकृतिवेदनाका प्रादुर्भाव नहीं देखा जाता । जिसके बिना जो नियमसे नहीं पाया जाता है वह उसका कार्य व दूसरा कारण होता हैं, ऐसा समस्त नैयायिक जनोंमें प्रसिद्ध है । इस कारण प्रदेशाग्रवेदनाके समान प्रकृतिवेदना भी योगप्रत्ययसे होती है यह सिद्ध है ।

कषाय प्रत्ययसे स्थिति व अनुभाग वेदना होती है ॥ १३ ॥

ज्ञानावरणीयकी स्थितिवेदना और अनुभागवेदना कषायसे होती है, क्योंकि, कषायकी वृद्धि और हानिसे स्थिति व अनुभागकी वृद्धि व हानि देखी जाती है । प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह और रात्रिभोजन प्रत्ययोंसे ज्ञानावरणीयका बन्ध नहीं होता है,

....

(१) प्रतिषु 'वड्ढिहाणिं' इति पाठः । (२) प्रतिषु 'जोगेण वि णाणा-' इति पाठः । (३) ताप्रतौ 'पादुब्भावा (व), दंसणादो' इति पाठः । (४) आप्रतौ 'पदेसग्गवेयणो व,' ताप्रतौ 'पदेसग्गो (ग्ग) वेयणो (णे) व' इति पाठः ।

बंधुवलंभादो । ण कोह-माण-माय-लोभेहि बज्झइ, कम्मोदइल्लाणं तेसिमुदयविरहिदद्धाए तब्बंधुवलंभादो । ण णिदाणब्भक्खाण-कलह-पेसुण्ण-अरइ-उवहि-णियदि-माण-माय-मोस-मिच्छाणाण-मिच्छादंसणेहि, बज्झइ, तेहि विणा वि सुहुमसांपराइयसंजदेसु तब्बंधुवलंभादो । यद्यस्मिन् सत्येव भवति नासति तत्तस्य कारणमिति न्यायात् । तम्हा णाणावरणीयवेयणा जोग-कसाएहि चेव होदि त्ति सिद्धं । वुत्तं च-

जोगा पयडि-पदेसे ट्ठिदि-अणुभागे कसायदो कुणदि[1] ।। ४ ।।

जदि एवं तो दव्वट्ठियणएसु पुव्विल्लेसु तीसु वि पाणादिवादादीणं पच्चयत्तं कत्तो जुज्जदे? ण, तेसु संतेसु णाणावरणीयबंधुवलंभादो । नावश्यं कारणाणि कार्यवन्ति भवन्ति, कुम्भमकुर्वत्यपि[2] कुम्भकारे कुम्भकारव्यवहारोपलम्भात् । ण च पर्यायभेदेन वस्तुनो भेदः, तद्व्यतिरिक्तपर्यायाभावात् सकललोकव्यवहारोच्छेदप्रसंगाच्च । न्यायश्चर्च्यते लोक-व्यवहारप्रसिध्द्यर्थम् न तद्बहिर्भूतो न्यायः, तस्य न्यायाभासत्वात् । ततस्तत्र तेषां कारणत्वं युज्यत इति ।

....

क्योंकि, उनके बिना भी अप्रमत्तसंयतादिकोंमें उसका बन्ध पाया जाता है । क्रोध, मान, माया व लोभसे भी उसका बन्ध नहीं होता, क्योंकि, कर्मके उदयसे होनेवाले उक्त क्रोधादिकोंके उदयसे रहित कालमें भी उसका बन्ध पाया जाता है । निदान, अभ्याख्यान, कलह, पैशून्य, रति, अरति, उपधि, निकृति, मान, मेय, मोष, मिथ्याज्ञान और मिथ्यादर्शन इनसे भी उसका बन्ध नहीं होता, क्योंकि, उनके बिना भी सूक्ष्मसांपरायिक संयतोंमें उसका बन्ध पाया जाता है । जो जिसके होनेपर ही होता है और जिसके न होनेपर नहीं होता है वह उसका कारण होता है, ऐसा न्याय है । इसी कारण ज्ञानावरणीय वेदना योग और कषायसे ही होती है, यह सिद्ध होता है । कहा भी है -

'योग प्रकृति व प्रदेशको तथा कषाय स्थिति व अनुभागको करती है' । ४ ।

शंका - यदि ऐसा है तो पूर्वोक्त तीनों ही द्रव्यार्थिक नयोंकी अपेक्षा प्राणातिपातादिकोंको प्रत्यय बतलाना कैसे उचित है ?

समाधान - नहीं, क्योंकि, उनके होनेपर ज्ञानावरणीयका बन्ध पाया जाता है । कारण कार्यवाले अवश्य हों, ऐसा सम्भव नहीं है क्योंकि, घटको न करनेवाले भी कुम्भकार में 'कुम्भकार' शब्दका व्यवहार पाया जाता है । दूसरे पर्यायके भेंदसे वस्तुका भेद नहीं होता है, क्योंकि, वस्तुसे भिन्न पर्यायका अभाव है तथा इस प्रकारसे समस्त लोक व्यवहारके नष्ट होनेका भी प्रसंग आता है । न्यायकी चर्चा लोक व्यवहारकी प्रसिद्धिके लिये ही की जाती है । लोकव्यवहारके बहिर्गत न्याय नहीं होता है, किन्तु वह केवल न्यायाभास ही है । इसीलिये उक्त प्राणातिपातादिकोंको प्रत्यय बतलाना योग्य ही है।

....

(१) जोगा पयडि-पदेसा ठिदि-अणुभागा कसायदो होंति । गो०क० २५७ ।

(२) प्रतिषु 'कुम्भमकुम्भयत्यपि' इति पाठः ।

एवं सत्तण्णं कम्माणं ।। १४ ।।

सव्वेसिं कम्माणं ट्ठिदि-अणुभाग-पयडि-पदेसभेदेण बंधो चउव्विहो चेव । तत्थ पयडि-पदेसा जोगादो ठिदि-अणुभागा कसायदो त्ति सत्तण्णं पि दो चेव पच्चया होंति । कधं दो चेव पच्चया अट्ठण्णं कम्माणं बत्तीसाणं पयडि-ट्ठिदि-अणुभाग-पदेसबंधाणं कारणत्तं पडिवज्जंते ? ण, असुद्धपज्जवट्ठिए उजुसुदे अणंतसत्तिसंजुत्तेगदव्वत्थित्तं पडि विरोहाभावादो। वट्टमाणकालविसयउजुसुदवत्थुस्स दवणाभावादो[1] ण तत्थ दव्वमिदि णाणावरणीयवेणा णत्थि त्ति वुत्ते-ण, वट्टमाणकालस्स वंजणपज्जाए पडुच्च अवट्ठियस्स सगासेसावयवाणं गदस्स दव्वत्तं पडि विरोहाभावादो । अप्पिदपज्जाएण वट्टमाणत्तमावण्णस्स[2] वत्थुस्स अणप्पिद-पज्जाएसु दवणविरोहाभावादो वा अत्थि उजुसुदणयविसए दव्वमिदि ।

सद्दणयस्स अवत्तव्वं ।। १५ ।।

कुदो ? तत्थ समासाभावादो । तं जहा-पदाणं समासो णाम किमत्थगओ पदगओ तदुभयगदो वा ? ण ताव अत्थगओ, दोण्णं पदाणमत्थाणमेयत्ताभावादो । ण

....

जिस प्रकार ऋजुसूत्र नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयके प्रत्ययोंकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार शेष सात कर्मोंके प्रत्ययोंकी भी प्ररूपणा करनी चाहियें ।। १४ ।।

स्थिति, अनुभाग, प्रकृति और प्रदेशके भेदसे सर्व कर्मोंका बन्ध चार प्रकार ही है । उनमें प्रकृति और प्रदेशबन्ध योगसे तथा स्थिति और अनुभागबन्ध कषायसे होते हैं, इस प्रकार सातों ही कर्मोंके दो ही प्रत्यय होते हैं ।

शंका - उक्त दो ही प्रत्यय आठ कर्मोंके प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशरूप बत्तीस बन्धोंकी कारणताको कैसे प्राप्त हो सकते हैं ?

समाधान - नहीं, क्योंकि, अशुद्धपर्यायार्थिक रूप ऋजुसूत्र नयमें अनन्त शक्ति युक्त एक द्रव्यके अस्तित्वमें कोई विरोध नहीं है ।

शंका - वर्तमान कालविषयक ऋजूसूत्र नयकी विषयभूत वस्तुका द्रवण नहीं होनेसे चूँकि उसका विषय द्रव्य हो नहीं सकता, अतः ज्ञानावरणीय वेदना उसका विषय नहीं है ?

समाधान - ऐसा पूछनेपर उत्तर देते हैं कि ऐसा नहीं है, क्योंकि, वर्तमानकाल व्यंजनपर्यायोंका आलम्बन करके अवस्थित है एवं अपने समस्त अवयवोंको प्राप्त है, अतः उसके द्रव्य होनेमें कोई विरोध नहीं है । अथवा, विवक्षित पर्यायसे वर्तमानताको प्राप्त वस्तुकी अविवक्षित पर्यायोंमें द्रवणका विरोध न होनेसे ऋजूसूत्र नयके विषयमें द्रव्य सम्भव ही है ।

शब्द नयकी अपेक्षा अवक्तव्य है ।। १५ ।।

कारण यह है कि उस नयमें समासका अभाव है । वह इस प्रकारसे-पदोंका जो समास होता है वह क्या अर्थगत है, पदगत है, अथवा तदुभयगत है ? अर्थगत तो हो नहीं सकता,

....

(१) अ-आप्रत्योः 'दमणाभावादो' इति पाठः । (२) अ-आप्रत्योः 'मावसण्णस्स' इति पाठः ।

ताव दोण्णं पदाणमत्थाण[1] मेयत्तं, तस्स आधाराभावादो । ण ताव पुव्वपदमाधारो, उत्तरपदुच्चारणस्स विहलत्तप्पसंगादो । ण उत्तरपदं पि, पुव्वपदुच्चारणस्स णिप्फलत्तप्पसंगादो । ण दो वि पदाणि आहारो, एयस्स णिरवयवस्स दोसु अवट्ठाणविरोहादो । ण च दोसु वि अत्थेसु एयत्तमावण्णेसु समासो वि अत्थि, दुब्भावेण विणा समासविरोहादो । ण पदगओ वि, दोसु वि पदेसु एयत्तमावण्णेसु दोण्णं पदाणमसवण्ण[2]प्पसंगादो । ण च एवं, दोहिंतो वदिरित्ततदिएग[3] पदाणुवलंभादो । उवलंभे वा ण सो समासो, दुब्भावेण विणा समासविरोहादो । णोभयगदो वि, उभयदोसाणुसंगादो[4] । तम्हा समासो णत्थि त्ति सिद्धं । तेण जोगसद्दो जोगत्थं भणदि, पच्चयसद्दो वि पच्चयट्ठं भणदि त्ति दोहि वि पदेहि एगो अत्थो ण परूविज्जदे । तेण जोगपच्चए पयडि-पदेसग्गं, कसायपच्चए ट्ठिदि-अणुभागवेयणा इदि अवत्तव्वं ।

अधवा, ण संतं कज्जमुप्पज्जदि, संतस्स उप्पत्तिविरोहादो । ण चासंतं, खरसिंगस्स वि उप्पत्तिप्पसंगादो । ण च संतमसंतं उप्पज्जदि[5], उभयदोसाणुसंगादो । तदो कज्ज-

....

कारण कि दो पदोंके अर्थोंमें एकता सम्भव नहीं है । दो पदोंके अर्थोंमें एकता इसलिये सम्भव नहीं है कि उसके आधारका अभाव है । यदि आधार है तो क्या उसका पूर्वपद आधार है अथवा उत्तरपद ? पूर्व पद तो आधार हो नहीं सकता, क्योंकि, वैसा होनेपर उत्तरपदका उच्चारण निष्फल ठहरता है । उत्तर-पद भी आधार नहीं हो सकता, क्योंकि, इस प्रकारसे पूर्वपदका उच्चारण व्यर्थ ठहरता है । दोनों पद भी आधार नहीं हो सकते, क्योंकि, निरवयव एक अर्थका दोमें अवस्थान विरुद्ध है । यदि कहा जाय कि एकताको प्राप्त हुए दो अर्थोंमें समास हो सकता है, सो यह भी सम्भव नहीं है, क्योंकि, द्वित्वके विना समासका विरोध है । पदगत (द्वितीय पक्ष) समास भी सम्भव नही हैं, क्योंकि दोनों पदोंके एकताको प्राप्त होनेपर दोनों पदोंके असवर्णताका प्रसंग आता है । परन्तु ऐसा हो नहीं सकता, क्योंकि, दो पदोंको छोडकर कोई तृतीय एक पद पाया नहीं जाता । अथवा यदि पाया जाता है तो वह समास नहीं कहा जा सकता, क्योंकि, द्वित्वके विना समासका विरोध है । उभय (अर्थ व पद) गत भी समास नहीं हो सकता, क्योंकि, दोनों पक्षोंमें दिये गये दोषोंका प्रसंग आता है । इस कारण समास सम्भव नहीं है, यह सिद्ध है । अब समासका अभाव होनेसे चूँकि योग शब्द योगार्थको कहता है और प्रत्यय शब्द प्रत्ययार्थको कहता है, अतः दोनों ही पदोंके द्वारा एक अर्थकी प्ररूपणा नहीं की जा सकती है । इसी कारण शब्द नयकी अपेक्षा 'योगप्रत्ययसे प्रकृति व प्रदेशाग्ररूप तथा कषाय प्रत्ययसे स्थिति व अनुभाग रूप वेदना होती है' यह कहा नहीं जा सकता ।

अथवा, सत् कार्य तो उत्पन्न होता नहीं है, क्योंकि, सत्‌की उत्पत्तिका विरोध है । असत् कार्य भी उत्पन्न नहीं हो सकता, क्योंकि, वैसा होनेपर गधेके सींगकी भी उत्पत्तिका प्रसंग आता है । सदसत् कार्य भी उत्पन्न नहीं होता है, क्योंकि, इसमें दोनों पक्षोंमें दिये गये दोषका प्रसंग

....

(१) अ-आप्रत्योः 'पदाणमद्धाण', ताप्रतौ 'पदाणमद्धा (त्था) ण-' इति पाठः । (२) अ-आप्रत्योः '-मस्सवण्ण-', ताप्रतौ '-मस्सवण-' इति पाठः । (३) अप्रतौ 'तदिएण' इति पाठः । (४) अ-आप्रत्योः 'संगदो' इति पाठः । (५) आप्रतौ 'संतमसंतं च उप्पज्जदि' इति पाठः ।

कारणभावो णत्थि त्ति णाणावरणीयपयडि-पदेसग्गवेयणा जोगपच्चए , ट्ठि-अणुभाग-वेयणा कसायपच्चए त्ति अवत्तव्वं । अधवा, ण समाणकाले वट्टमाणाणं कज्ज-कारणभावो जुज्जदे, दोण्णं संताणमसंताणं संतासंताणं च कज्ज-कारणभावविरोहादो । अविरोहे वा एगसमए चेव सव्वं उप्पज्जिदूण बिदियसमए कज्ज-कारणकलावस्स णिम्मूलप्पलओ होज्ज । ण च एवं, तहाणुवलंभादो । ण च भिण्णकालेसु वट्टमाणाणं कज्ज-कारणभावो, दोण्णं संताणमसंताणं च कज्जकारणभावविरोहादो । ण च संतादो असंतस्स उप्पत्ती, विंझादो[1] गयणकुसुमाणं पि उप्पत्तिप्पसंगादो । ण च असंतादो संतस्स उप्पत्ती, गद्दहसिंगादो दद्दुरुप्पत्तिप्पसंगादो । ण च असंतादो असंतस्स उप्पत्ती, गद्दहसिंगादो गयणकुसुमाणमुप्पत्तिप्पसंगा । तदो कज्ज-कारणभावो णत्थि त्ति अवत्तव्वं । अधवा, तिण्णं सद्दणयाणं णाणावरणीयपोग्गलक्खंधोदयजणिदअण्णाणं[2] वेयणा । ण सा जोग-कसाएहिंतो उप्पज्जदे, णिस्सत्तीदो सत्तिविसेसस्स उप्पत्तिविरोहादो । णोदयगदकम्मदव्वक्खंधादो उप्पज्जदि, पज्जयवदिरित्तदव्वाभावादो । तेण तिण्णं सद्दणयाणं णाणावरणीयवेयणापच्चओ अवत्तव्वो ।

....

आता है । इस कारण कार्यकारणभाव न बन सकनेसे 'ज्ञानावरणीयकी प्रकृति व प्रदेशाग्र रूप वेदना योगप्रत्ययसे तथा स्थिति व अनुभागरूप वेदना कषायप्रत्ययसे होती है' यह उक्त नयकी अपेक्षा अवक्तव्य है ।

अथवा, समानकालमें वर्तमान वस्तुओंमें कार्यकारणभाव युक्त नहीं है, क्योंकि, उन दोनोंके सत् असत् व उभय, इन तीनों पक्षोंमें कार्य-कारणका विरोध है । और यदि विरोध न माना जाय तो एक समयमें ही समस्त कार्यके उत्पन्न हो जानेपर द्वितीय समयमें कार्य-कारण कलापका निर्मूल नाश हो जावेगा । परन्तु ऐसा सम्भव नहीं है, क्योंकि, वैसा पाया नहीं जाता । समासकालसे भिन्न कालोंमें भी वर्तमान उनके कार्य-कारणभाव नहीं बनता, क्योंकि, उन दोनोंके सत्, असत् व उभय, इन तीनों पक्षोंमें कार्यकारणभावका विरोध है । यदि सत्से असत्की उत्पत्ति स्वीकार की जाय तो वह सम्भव नहीं है, क्योंकि, ऐसा होनेपर विन्ध्याचलसे आकाश कुसमोंके भी उत्पन्न होनेका प्रसंग आता है । असत्से सत्की उत्पत्ति भी सम्भव नहीं है, क्योंकि, ऐसा माननेपर असत् गर्दभसींगसे मेंढककी उत्पत्तिका प्रसंग आता है । इसी प्रकार असत्से असत्की उत्पत्ति भी सम्भव नहीं है, क्योंकि, वैसा स्वीकार करनेपर गर्दभसींगसे आकाशकुसुमोंके उत्पन्न होनेका प्रसंग आता है । इस कारण चूँकि कार्य-कारणभाव बनता नहीं है, अतएव ज्ञानावरणकी वेदना अवक्तव्य है ।

अथवा तीनों शब्द नयोंकी अपेक्षा ज्ञानावरणीय संबंधी पौद्गलिक स्कंधोंके उदयसे उत्पन्न अज्ञानको ज्ञानावरणीय वेदना कहा जाता है । परंतु वह योग व कषायसे उत्पन्न नहीं हो सकती, क्योंकि, जिसमें जो शक्ति नहीं है उससे शक्ति विशेषकी उत्पत्ति माननेंमें विरोध है । तथा उदयगत कर्म द्रव्यस्कंध से भी उत्पन्न नहीं हो सकती, क्योंकि, (इन नयोंमें) पर्यायोंसे भिन्न द्रव्यका अभाव है । इस कारण तीनों शब्दनयोंकी अपेक्षा ज्ञानावरणीय वेदनाका प्रत्यय अवक्तव्य है ।

....

(१) अ-ताप्रत्योः 'विज्झादो' इति पाठः । (२) ताप्रतौः 'अण्णाणवेयणा' इति पाठः ।

एवं सत्तण्णं कम्माणं ।। १६ ।।

सुगमं ।

एवं वेयणापच्चयविहाणे त्ति समत्तमणुयोगद्दारं ।

....

इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके विषयमें भी प्ररूपणा करनी चाहिये ।। १६ ।।

यह सूत्र सुगम है ।

विशेषार्थ – यहाँ सात नयोंकी अपेक्षा कौन वेदना किस प्रत्ययसे होती है यह बतलाया गया है। नैगम, संग्रह और व्यवहार ये तीन द्रव्यार्थिक नय हैं इसलिए इनकी अपेक्षा ज्ञानावरण आदिके बन्ध प्राणातिपात आदि जितने भी कारण होते हैं अर्थात् जिनके सद्भावमें ज्ञानावरणादि कर्मोंका बन्ध होता है वे सब प्रत्यय कहे जाते हैं । ऋजुसूत्र नयकी अपेक्षा प्रकृति और प्रदेशबन्ध योगप्रत्यय और स्थिति व अनुभागबन्ध कषाय प्रत्यय होता है । कारण कि बन्धके ये दो ही साक्षात् प्रत्यय हैं । यद्यपि ऋजुसूत्रनय कार्य-कारणभावको ग्रहण नहीं करता परन्तु अशुद्ध द्रव्यार्थिक नयमें यह सब बन जाता है इसलिए उक्त प्रकारसे कथन किया है ।

इस प्रकार वेदनाप्रत्ययविधान अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।